International Journal of Applied Research 2017; 3(1): 896-898

**ISSN Print:** 2394-7500
**ISSN Online:** 2394-5869
**Impact Factor:** 5.2
IJAR 2017; 3(1): 896-898
www.allresearchjournal.com
Received: 16-11-2016
Accepted: 23-12-2016

**शांत्वना कुमारी**
शोध–प्रज्ञा, विश्वविद्यालय
गृहविज्ञान विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

**Corresponding Author:**
**शांत्वना कुमारी**
शोध–प्रज्ञा, विश्वविद्यालय
गृहविज्ञान विभाग, ल.ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

# स्कूलीय शिक्षा का बच्चों के सामाजिक, मानसिक एवं शारीरिक विकास पर प्रभाव एक अध्ययन

## शांत्वना कुमारी

**सारांशः**
किसी भी राष्ट्र का आदर्श उसके शिक्षण संस्थाओं से प्रतिबिम्बित होता है। सामाजिक मूल्यों का सृजन, पोषण एवं स्थानान्तरण में शिक्षा की अहम् भूमिका होती है। विद्वानों का मत है कि शिक्षा जीवन की बुनियाद है और बच्चे उस नींव पर बनने वाली इमारत। आज का बच्चे कल का राष्ट्र निर्माता है। "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है।" इस अभीष्ठ लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये विश्व स्तर की सरकारी एवं गैर सरकारी कई संगठन कार्य कर रहे हैं। जिससे की स्कूलीय शिक्षा का बच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक विकास हो सके।

**प्रस्तावनाः**
किसी भी बच्चे के सामाजिक विकास में विद्यालय का योगदान महत्वपूर्ण होता है। बेन (1973) के अनुसार, ''जब बच्चा स्कूल में प्रवेश करता है, तब वह जीवन के पहले छह वर्षों के सुफल या कुफल चखना शुरू करता है।'' विद्यालय में पहुँच कर बच्चे एक बड़े समूह के साथ अन्तर्क्रिया करते हैं। बाल्यावस्था में सामाजीकरण की गति तीव्र हो जाती है। बच्चे विद्यालय के माध्यम से वाह्य समाज के सम्पर्क में आते हैं। जिसके फलस्वरूप उसका सामाजिक विकास बहुत तीव्र गति से होता है। विद्यालय में होने वाले सामाजिक विकास को निम्नांकित ढंग से व्यक्त किया जा सकता है–

1. बच्चे विद्यालय के माध्यम से किसी न किसी समूह का सदस्य बन जाते हैं। यह समूह ही उसके खेलों, वस्त्रों की पसन्द तथा अन्य उचित–अनुचित बातों का निर्धारण करते हैं। बच्चे समूह के द्वारा निर्धारित अथवा पसन्द किये गये कार्य व्यवहारों को अपनाना चाहते हैं।
2. विद्यालय में बच्चे के अन्दर अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है। उत्तरदायित्व, सहयोग, साहस, सहनशीलता, सद्भावना, आत्मनियंत्रण, न्यायप्रियता आदि सामाजिक गुण बच्चे में धीरे–धीरे उदय होने लगते हैं।
3. इस अवस्था के बालक तथा बालिकाओ ं की रुचियों में स्पष्ट अंतर दृष्टिगोचर होता है।
4. विद्यालय में प्रायः बच्चे घर से बाहर होने के कारण शिष्टतापूर्ण व्यवहार करना सीखते हैं।
5. इस अवस्था में बच्चे में सामाजिक स्वीकृति तथा प्रशंसा पाने की तीव्र इच्छा होती है, जिसकी पूर्ति अधिकतर विद्यालय में ही होती है।
6. बाल्यावस्था में बच्चे मित्रों का चुनाव करते हैं। वे प्रायः कक्षा के सहपाठियों को अपना घनिष्ठ मित्र बनाते हैं।

बाल्यावस्था में बच्चों द्वारा किये जाने वाले उपरोक्त वर्णित सामाजिक व्यवहारों से स्पष्ट है कि इस अवस्था में उनके सामाजिक जीवन का क्षेत्र कुछ विस्तृत हो जाता है, जिसके फलस्वरूप बच्चो के समाजीकरण के अवसर तथा सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। उसके शारीरिक तथा मानसिक विकास के साथ–साथ उसका समाजीकरण होने लगता है। वह अपने माता–पिता, परिवार के सदस्यों, मित्रों तथा अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है। जिसके फलस्वरूप वह सामाजिक परम्पराओं, मान्यताओं, रूढ़ियों आदि के अनुरूप व्यवहार करना सीखता है। सामाजिक जगत में अपने को समायोजित करने का प्रयास करता है। समाजीकरण की इस प्रक्रिया से बच्चे का सामाजिक विकास होता है। सामाजिक विकास से तात्पर्य विकास के उस प्रक्रिया से है, जिसके द्वारा बच्चे अपने सामाजिक वातावरण के साथ अनुकूलन करते हैं, सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप अपनी आवश्यकताओं और रुचियों पर नियंत्रण करते हैं। दूसरों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करते हैं तथा समाज के अन्य लोगों के साथ प्रभावपूर्ण ढंग से सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं। सामाजिक विकास के फलस्वरूप बच्चे समाज का एक मान्य सहयोगी तथा कुशल नागरिक बन जाते हैं। समाज में रहकर ही बच्चे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा जन्मजात प्रवृत्तियों व योग्यताओं का विकास करते हैं। समाज में रहकर ही वह दूसरों के सम्पर्क में आता है, जिससे वह समाज के मूल्यों,

विश्वासों तथा आदर्शों में आस्था रखने लगता है तथा समाज की जीवन–शैली को अपनाता है। उसमें सहअस्तित्व की भावना आ जाती है, वह सामाजिक हित में तथा लोककल्याण की भावना से अपने निहित स्वार्थों का त्याग करना सीख जाता है तथा सामाजिक गुणों को विकसित करके समाज में अनुकूलन स्थापित करने का प्रयास करता है। अन्य लोगों के साथ सम्पर्क करने एवं अनुकूलन स्थापित करने की योग्यता सामाजिक विकास का ही परिणाम है, घर, परिवार, पड़ोस, मित्र–मंडली, विद्यालय, समुदाय, जनसंचार साधन तथा राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थायें बच्चे के सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करती है। बच्चे के सामाजिक विकास को शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है। आधुनिक समय में शिक्षा का एक प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति का सामाजिक विकास करना है। अतः शिक्षा के द्वारा बच्चों के न केवल शारीरिक व मानसिक विकास को प्रोत्साहित किया जाता है, वरन् उनके सामाजिक विकास को भी प्रोत्साहित करने का प्रयास किया जाता है। शिक्षा बच्चे के समाजीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान देती है। घर में माता–पिता तथा विद्यालय में अध्यापकगण विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों का आयोजन करके बच्चों में समाजीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाते हैं।

**विद्यालयी शिक्षा से सामाजिक विकासः**

किसी बच्चे के सामाजिक विकास में विद्यालय महत्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करते हैं। घर की ही भाँति विद्यालय के तत्त्वों का भी प्रभाव बच्चे की सामाजिकता पर पड़ता है। वास्तव में घर और विद्यालय, माता–पिता और शिक्षक इन दोनों में बहुत अधिक अन्तर नहीं किया जा सकता। दोनों का उद्देश्य बच्चे का समुचित सामाजिक एवं नैतिक विकास करना होता है। विद्यालय में मुख्यतः जिन दो तत्त्वों का प्रभाव बच्चे के ऊपर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है, वे हैं – शिक्षक और बच्चे के मित्र। अच्छे शिक्षक सदा बच्चे के सम्मुख अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और कक्षा के भीतर बच्चे के व्यक्तित्व के विकास के लिए सुन्दर से सुन्दर वातावरण उत्पन्न करते हैं। विद्यालयों में साथियों के साथ भी मिल–जुलकर बच्चे अनेक सामाजिक गुणों को ग्रहण करते हैं। नेतृत्व और सहकारिता के गुणों का विकास विद्यालय के वातावरण में ही होता है। विद्यालय हमारे समाज का एक ऐसा अंग है जहाँ बच्चे अपनी ही आयु के अनेक बच्चों के साथ मिलने और कार्य करने का अवसर पाता है। प्रिय और अप्रिय सभी प्रकार के अनुभवों को वह मित्रों के सम्पर्क में आकर वहीं प्राप्त करते हैं और इस प्रकार भावी जीवन के लिए विद्यालय में उचित ढंग से तैयारी करते हैं।

विद्यालय एक ऐसा महत्वपूर्ण कारक है, जो बच्चे के सामाजिक विकास सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तत्वों को प्रभावित करते हैं। विद्यालय से वंचित बच्चों का सामाजिक विकास काफी प्रभावित होता है, जो आगे चलकर बच्चे के व्यक्तित्व को पर्याप्त रूप से प्रभावित करती है। इस तरह के बच्चों को समाज विरोधी आपराधिक गतिविधियों में लिप्त होने मे ज्यादा समय नहीं लगता या ऐसे बच्चे कुण्ठित होकर एकांकी जीवन व्यतीत करने लगते हैं। इनका राष्ट्र के, समाज के, अपने परिवार के एवं स्वयं के विकास में कोई रुचि नहीं रह जाती है। यह राष्ट्र पर बोझ स्वरूप हो जाते हैं।

**मानसिक विकासः**

मानसिक विकास से तात्पर्य मानसिक शक्तियों में वृद्धि से है। इसके अन्तर्गत संवेदनशीलता, प्रत्यक्षीकरण, प्रत्यय निर्माण, अवलोकन, ध्यान, स्मृति, कल्पना, चिन्तन तर्क, निर्णय, बुद्धि, भाषा, अधिगम आदि शक्तियाँ आती हैं। जन्म के समय शिशु का मस्तिष्क अपरिपक्व होता है। जैसे–जैसे उसकी आयु में वृद्धि होती है, वैसे–वैसे उसके मस्तिष्क का विकास होता जाता है। परिपक्वता तथा अधिगम के फलस्वरूप बच्चे का मानसिक विकास होता है। मानसिक विकास अर्थात् समझने की शक्ति, स्मरण शक्ति, कल्पना करने की शक्ति, तर्क करने की शक्ति तथा बुद्धि आदि के विकास को शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण स्वीकार किया जाता है। यद्यपि विकास की प्रक्रिया गर्भाधान के क्षण से प्रारम्भ हो जाती है तथा मृत्युपर्यन्त चलती है।

बाल्यावस्था में मानसिक विकास की गति शैशवावस्था की तुलना में कम होती है। फिर भी, बच्चों के समझने, स्मरण करने, विचार करने, समस्या का समाधान करने, प्रत्यक्ष ज्ञान करने, चिन्तन करने, निर्णय लेने जैसी शक्तियों का विकास होता है। बाल्यावस्था छठें वर्ष से बारहवें वर्ष तक मानी जाती है।

बाल्यावस्था में होने वाले मानसिक क्षमताओं के विकास के दौरान बच्चों की ज्ञानेन्द्रियाँ परिपक्व होने लगती है, उनका चिन्तन तथा तर्क वाह्य केन्द्रित होने लगता है, उनकी निर्णय शक्ति विकसित हो जाती है, वे पढ़ने–लिखने तथा अन्य क्रियाओं में रुचि लेते हैं, पहेली बूझने, समस्यात्मक खेलों तथा क्रियाओं को करने में उनकी रुचि बढ़ जाती है।

बाल्यावस्था के मानसिक विकास के क्षेत्र में दिये गये सिद्धांतों में प्याजे द्वारा दिये गये अध्ययन में उपर्युक्त अवस्थाएँ क्रमशः जटिल होती जाती है। बच्चों द्वारा एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाने की गति उनकी शारीरिक परिपक्वता तथा वातावरणीय अनुभवों पर आधारित होती है। कुछ बच्चों का बौद्धिक विकास तीव्र गति से होता है, कुछ का औसत गति से होता है तथा कुछ का मंद गति से होता है। यही कारण है कि विभिन्न अवस्थाओं की आयु सीमा तथा अवधि पूर्णरूपेण निश्चित न होकर लगभग होती है। कोई भी अवस्था एकदम समाप्त नही होती, बल्कि बच्चे शनैः शनैः एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रविष्ट होते हैं।

**शारीरिक स्वास्थ्यः**

शारीरिक स्वास्थ्य का मानसिक स्वास्थ्य से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। प्राचीनकाल से ही स्वीकार किया जाता है कि, स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है, शारीरिक दृष्टि से सबल तथा स्वस्थ बच्चे, निर्बल व अस्वस्थ बच्चे की अपेक्षा अपनी मानसिक क्षमताओं को अधिक विकसित कर लेते हैं।

शिक्षा शब्द का प्रयोग मानव शरीर व मानसिक व्यवहार में परिवर्तन हेतू प्रक्रिया के लिए व ज्ञान के लिए तथा पाठ्यचर्या के एक विषय के लिए किया जाता है शिक्षा में शिक्षा की प्रक्रिया के अंगों में शिक्षक विद्यार्थी तथा पाठ्चर्या का विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

बालक का विकास उसके सभी पक्षों का साथ–साथ होता है लेकिन यह सत्य भी सिद्ध हो चुका है कि बालक का शारीरिक विकास उसके मानसिक विकास का आधार होता है मस्तिष्क की उन्नत क्रियाशीलता शारीरिक संरचना की अभिवृति तथा मानसिक विकास की सरंचना एवं अन्तर को स्पष्ट करते हुए स्कीनर का मत है कि मानसिक क्रियाओं के विकास का सर्वश्रेष्ठ अभिसूचक शारीरिक विकास की प्रगति की मात्रा है। फिर भी शारीरिक और मानसिक विकास में एक बहुत बड़ा अन्तर है बालक जन्म से ही अपने साथ कई पासविक प्रवृत्तियाँ लेकर आता है और धीरे–धीरे विकास करता जाता है बालक को समाज में रहने पर बुद्धि का वातावरण के साथ तालमेल करके अपने मनोवृत्ति पर नियंत्रण करने की शिक्षा प्राप्त होती है। शिक्षा प्राप्त होने पर ही बालक पासविक प्रवृत्तियों को त्याग कर एक अच्छा मनुष्य का रूप धारण करता है। और यह शिक्षा से ही संभव है। शिक्षा ही संस्कृति एवं सभ्यता की जननी है। इसके बिना मनुष्य पशु मात्र है। शिक्षा के द्वारा मनुष्य अपनी बुद्धि का विकास कर पाता है। तथा अपने संवेगों पर नियंत्रण भी। शिक्षा से मनुष्य में परिपक्वता का विकास हो पाता है।

**निष्कर्षः**

अतः हम कह सकते हैं कि शिक्षा ग्रहण करने के लिये जब बच्चे

विद्यालय में जाते हैं, तो उस पर विद्यालय के वातावरण का प्रभाव पड़ता है, जिससे बच्चे का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास होता है। इसी विकास के फलस्वरूप बच्चे समाज में अपना स्थान स्थापित करते हैं। यदि बच्चे किसी कारणवश विद्यालय त्याग कर अन्य कार्यो में लग जाते हैं, तो उसके व्यक्तित्व के इन पहलुओं का विकास प्रभावित होता है। जिसके परिणामस्वरूप उस बच्चे का सामाजिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास एवं स्वयं के व्यक्तित्व विकास पूर्ण नहीं हो पाता है। शिक्षा व्यक्ति को बाल्यावस्था से वृद्धावस्था तक निरंतर जीवन जीने में सहायता करती है। अपने आप को परिवर्तित करके स्वयं को प्रगति की ओर ले जाने की दिशा शिक्षा से ही मिलती है। समाज की बदलती आवश्यकताओं के अनुसार समय व स्थान का चयन मनुष्य शिक्षा के माध्यम से ही कर पाता है तथा उचित निर्णय ले सकता है। समाज में शिक्षित वहीं माना जाता है जो शिक्षित के समान व्यवहार करें अर्थात शिक्षा मूल प्रवृत्तियों से युक्त पशुवत् प्राणी का व्यवहार परिवर्तित कर उसे समाज का सक्रिय, सम्माननीय सदस्य बनाती है। जिस प्रकार शारीरिक विकास के लिए भोजन का महत्व है उसी प्रकार सामाजिक विकास के लिए शिक्षा का। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसकी मूल प्रवृत्तियों में कार्य शिक्षा ही करती है जिससे व्यक्ति समाज सम्मत व्यवहार सीखता है। यह समाज सम्मत व्यवहार ही समाज के विकास का आधार बनाता है।

**संदर्भः**


1. डॉ. प्रीति वर्मा, डॉ. डी. एन श्रीवास्तवः आधुनिक प्रयोगात्मक मनोविज्ञान, 1992
2. डॉ. प्रीति वर्मा, डॉ. डी. एन श्रीवास्तवः आधुनिक समाज मनोविज्ञान, 1992
3. Mussen PH. *et al.* Child Development & Personality, 1974.
4. Piaget J. The Science of Education and Psychology of the Child, 1970.
5. Maier HW. Three Theories of Child Development, 1969.
6. Kavita Verma and Puspalata Sharmaः विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता पर लिंग, परिवेश एवं सामाजिक वर्ग का अन्तः क्रियात्मक प्रभाव, परिप्रेक्ष्य, वर्ष 18, अंक 2, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 2011
7. Rambabu Guptaः शिक्षा मनोविज्ञान कानपुर, अलका प्रकाशन, 1994